यज्ञों की वैज्ञानिकता–एक समीक्षा

मीरा वाणी
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
meeravani85@gmail.com

प्राप्त तिथि– 20.05.2015, स्वीकृत तिथि– 13.08.2015

सार

वैदिक धर्म, संस्कृति तथा चिन्तन का आधारस्तम्भ "यज्ञ" है। आज समस्त प्राणी जगत् पर्यावरण प्रदूषण से ग्रसित है। वैदिक ऋषियों ने प्राकृतिक सन्तुलन को बनाये रखने के लिए यज्ञों की अनिवार्यता को बताया है। "यज्ञ" पवित्र अग्नि में हवन–सामग्रियों(औषधियों) को अर्पित करने की प्रक्रिया है। यज्ञ का उद्देश्य मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाना ही नहीं है अपितु इसकी रोगनिवारक एवं वैज्ञानिक महत्ता भी है। यज्ञानुष्ठान के दो प्रमुख तत्व(ऊर्जायें) हैं– 1. ध्वनि(ध्वनि तरंगें उच्चारण के रूप में) 2. ताप(उष्णता–अग्नि से उत्पन्न ऊर्जा के रूप में)। यज्ञ मात्र वातावरण को प्रदूषण रहित नहीं करता अपितु वातावरण में रोगनिवारक शक्ति विकसित करता है। यज्ञ द्वारा वातावरण सूक्ष्म जीवाणुओं एवं विषाणुओं से रहित होता है जिससे समस्त मानव जीव–जन्तु रोगों से मुक्त हो जाते हैं। यज्ञानुष्ठान से इससे मानव–मस्तिष्क तथा त्वचा की कोशिकायें पुनर्जीवित होती हैं, रक्तशोधन होता है तथा क्षयरोग, अस्थमा, खसरा, चेचक, श्वांस सम्बन्धी तथा त्वचा सम्बन्धी बीमारियों के रोगाणुओं को बढ़ने से रोकता है। वैज्ञानिक अध्ययन से विदित होता है कि यज्ञ प्रक्रिया का उपयोग मनोरोग, तन्त्रिका रोग तथा अवसाद पीड़ित आदि बीमारियों के निवारण हेतु भी उत्तम है। अतः यज्ञ पर्यावरण शोधन के साथ मानव–जीवन को रोगमुक्त एवं स्वस्थ बनाता है।

बीज शब्द– देवपूजन, संगतिकरण, दान, ताप, ध्वनि, रोगनिवारक, आध्यात्मिक, तन्त्रिका रोग, मानस शास्त्र सम्बन्धी, प्रदूषण, वातावरण।

Scientific study of yajya- A review

Meera Vani
Associate Professor and Head, Department of Sanskrit
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
meeravani85@gmail.com

Abstract

"Yajya" is the basic foundation of Vedic religion, culture and thought. Presently the whole of humankind is suffering from pollution. Our Vedic Rishi had always emphasized the importance of "Yajya" to maintain the natural balance. "Yajya" is the process of herbal sacrifies in to the holy fire. It not only aimed for spiritual benefits but also had scientific and therapeutic values. "Yajya" being using two basic energy systems in the physical world - 1. Sound energy(in the form of mantras) and 2. Heat energy(in form of fire), created a recreation in the environment. This is achieved by establishing thereby making life more disease free. Yajya's literal meaning is healing process. It heals the atmosphere and the healed atmosphere would heal mankind. Scientific study has found that the electrons generated during this process purify the blood and prevent the growth of pathogenic organism like T.B., Asthma, Measles, Chickenpox, Skin diseases, and Lung Cancer etc. Scientists have showed that "Yajya" is being used as an excellent remedy for the treatment of various mental disorder like psychosis, neurosis depression etc.

Thus, "Yajya" is beneficial for environment and human should opt it in their day to day life for the sake of disease free and healthy life in future.

Keywords- Devapujana, unity, charity, heat, sound, pathogenic, spiritual, neurosis, psychological, pollution, atmosphere.

प्रस्तावना– "सर्वं यज्ञमयं जगत्" सम्पूर्ण जगत् यज्ञमय है। प्रकृति सहचरी के सुरम्य अन्चल में निवसित जीव–जन्तुओं, मानव–जीवन के कल्याणार्थ तथा स्वास्थ्यवर्द्धनार्थ यज्ञों की महत्ता सर्वविदित है। भौतिकवाद तथा विज्ञान के युग में मानवीय गतिविधियों तथा प्राकृतिक सन्तुलन बनाने में यज्ञों को अपनाना नितान्त आवश्यक हो गया है क्योंकि वैदिक ऋषियों एवं मनीषियों ने यज्ञ विद्या को अपनाकर ही विश्वकल्याण, त्रिविध–ताप–प्रशमन तथा विविध रोगों से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया है।[1] इतना ही नहीं अपितु "यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म" अर्थात् समस्त कर्मों में यज्ञ ही श्रेष्ठतम कर्म है। "सर्वेषां देवानाम् आत्मा यद् यज्ञः" अर्थात् यज्ञ को समस्त देवों की "आत्मा" कहा गया है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्वों में "यज्ञ" ही प्रधान है। वैदिक भारत में यज्ञों का प्राधान्य था। वैदिक भारत में मानव–जीवन की प्रवृत्ति एवं निवृत्ति का एकमात्र आधार यज्ञ था, यहाँ की प्रत्येक क्रिया में वेदों की ऋचाओं के माध्यम से यज्ञ का विधान था।[2] भारतीय संस्कृति में गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि संस्कार तक के समस्त कार्यों में यज्ञों का आवश्यक विधान था। किसी भी समारोह या उत्सव में यज्ञ का होना परमावश्यक था। यज्ञ का उद्देश्य मात्र पर्यावरण शुद्धि एवं रोगनाशक ही नहीं अपितु यज्ञ मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाने का साधन भी है। यज्ञों के महत्त्व की स्वीकृति वेदों में उद्घोषित है।[3] वेदों में यज्ञ को विश्व की नाभि कहा गया है– "अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।"[4] शरीर विज्ञान की दृष्टि से जैसे शरीर में नाभि का विशिष्ट स्थान है वैसे ही विश्व में "यज्ञ" का प्रमुख स्थान है। विश्वसृजन एवं पालन, यज्ञ प्रक्रिया के ही प्रतिफल है। यथा– नवजात शिशु जन्म से पूर्व नाभि के माध्यम से ही माता के शरीर से संयोजित होकर रस(भोजन) प्राप्त करता है और उसी से भोजन प्राप्त करके जीवित रहता है उसी प्रकार सांसारिक प्राणी भी यज्ञ से जुड़कर स्वस्थ एवं सुखमय जीवन को प्राप्त करता है।

वैदिक वाङ्मय में वैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु यज्ञ प्रतीत होता है। यज्ञ–संस्था के अभाव में वैदिक धर्म, दर्शन एवं भारतीय संस्कृति को जानना असंभव है। आज वैज्ञानिक भी अपने अनुसन्धान के परिणामस्वरूप यह स्वीकार करने लगे हैं कि गन्धगुण वाली शुद्ध मिट्टी तथा राख वातावरण तथा शरीरस्थ व्याप्त विषाणुओं, कीटाणुओं एवं जीवाणुओं को नष्ट करने में सर्वथा सक्षम हैं। यज्ञ कर्म से वातावरण परिशुद्ध रहता है। "यज्ञ" मानव–जीवन तथा वैदिक साहित्य(ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण तथा सूत्रों आदि) का अविभाज्य अंग है। वैदिक ऋषियों की सम्पूर्ण जीवनचर्या यज्ञ कर्मों से अनुप्राणित थी। "यज्ञ" शब्द यज् धातु से निर्मित है जिसका अर्थ है–
1. देवपूजा, 2. संगतिकरण, 3. दानादि(यज्देवपूजासंगतिकरण दानेषु)। सामान्यतया देवों का आहवान करके किसी उद्देश्य हेतु अग्नि के माध्यम से दिया गया(हविष् आदि) दान–त्याग ही यज्ञ है।[5]

संगतिकरण– संगतिकरण का अर्थ है "संगठन"। यज्ञ का प्रमुख उद्देश्य धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों को सद्प्रयोजन हेतु मन्त्रोच्चारण के द्वारा संगठित करना ही "यज्ञ" है। यज्ञ की तीन विधाएं हैं– 1. इष्टि, 2. पशुबन्ध, 3. सौमिक।
इष्टि– इष्टि में पुरोडाश की मुख्य आहुति दी जाती थी।
पशुबन्ध– पशुबन्ध में पशु की आहुति दी जाती थी।[6] प्रतीकात्मक पशु की आहुति का उल्लेख है। "वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति।" ब्राह्मण ग्रन्थों में अनेक स्थलों से यज्ञ का प्रतीकात्मक स्वरूप प्रकाश में आया है।
सौमिक– सौमिक में सोम–रस की आहुति दी जाती थी। ब्राह्मण–ग्रन्थों में उपर्युक्त तीनों का अत्यधिक उल्लेख नहीं मिलता।

इसी प्रकार यज्ञों का एक अन्य विभाजन है– 1. नित्य (यज्ञ) कर्म, 2. नैमित्तिक (यज्ञ) कर्म, 3. काम्य (यज्ञ) कर्म।

नित्य (यज्ञ) कर्म– अपरिहार्य प्रकृति के कर्म हैं जिन्हें दैनन्दिन करना होता था।
नैमित्तिक (यज्ञ) कर्म– यह यज्ञ कर्म विशिष्ट उद्देश्यों एवं अवसरों पर किये जाते थे।
काम्य (यज्ञ) कर्म– वे यज्ञ थे जो विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किये जाते थे। प्रो० हिलेब्रांट ने यज्ञों का वर्गीकरण नित्य एवं नैमित्तिक ही माना है तथा यज्ञ प्रक्रिया की विशिष्टता को माना है। यज्ञ को ही प्रजापति व विष्णु कहा गया है– "यज्ञो वे श्रेष्ठतमं कर्म, प्रजापतिर्वैर्यज्ञः। यज्ञो वै विष्णुः.....।"[7,8] आशय यही है कि वैदिक धर्म एवं वैदिक संस्कृति में यज्ञ का प्रमुख स्थान है।

प्राचीन भारतीय हिन्दू जाति ने नित्य के धार्मिक कृत्यों में पाँच महायज्ञों का अनिवार्य विधान किया है। मनुस्मृतिकार मनु ने अपनी रचना मनुस्मृति के तीसरे अध्याय में लिखा है कि प्रत्येक गृहस्थ से पाँच प्रकार की हिंसाएं प्रतिदिन होती है(चूल्हा, चक्की, झाड़ू, ओखली–मूसल और घटादि से) इन हिंसाओं के प्रायश्चित स्वरूप मनु ने पाँच महायज्ञों का विधान किया है। मनु के अनुसार पन्च महायज्ञ निम्न हैं–

"ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा।
नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत्।।"

1. ऋषि यज्ञ, 2. देव यज्ञ, 3. भूत यज्ञ, 4. नृयज्ञ, 5. पितृ यज्ञ, अर्थात् उपर्युक्त पन्च यज्ञों को यथाशक्ति नहीं छोड़ना चाहिए अपितु इनका अनुष्ठान करते रहना चाहिए। ये महायज्ञ यदि नित्य विधिपूर्वक श्रद्धापूर्वक किये जाते हैं तो मनुष्य का जीवन निरन्तर उन्नत, पवित्र और महान् हो जाता है और अन्ततः वह मनुष्य मोक्ष का अधिकारी बनता है।

1. **ऋषि यज्ञ**– इस यज्ञ के अंतर्गत स्वाध्याय और सन्ध्योपासना ये दो कर्म आते हैं। स्वाध्याय के दो अर्थ हैं प्रथम तो यह कि मनुष्य प्रतिदिन प्रातः एवं संध्या सद्ग्रन्थों(धार्मिक ग्रन्थों) का पठन–पाठन एवं चिन्तन करे। परिणाम स्वरूप इससे मनुष्य के दुर्गुणों का क्षय होगा तथा सद्गुणों की अभिवृद्धि होगी। स्वाध्याय से यह आशय है कि मानव स्वयं प्रतिदिन आत्म–निरीक्षण करे तथा आत्म निरीक्षण करते हुए अपने दुर्गुणों का परित्याग और सद्गुणों का वर्द्धन करने का प्रयत्न करे। उपर्युक्त सन्ध्योपासना में मानव के निर्माण का प्रयत्न स्पष्ट परिलक्षित होता है। मानवमात्र जब आत्म निरीक्षण करता हुआ परमात्मा में लीन होता है, तभी विश्वकल्याण सम्भव है।

2. **देव यज्ञ**– देव यज्ञ का दूसरा नाम "अग्निहोत्र" है। अग्निहोत्र भी प्रातः सम्पन्न करना चाहिए। वेदमन्त्रों के द्वारा किया गया यह अग्निहोत्र मानव का कल्याण करता है। इससे वातावरण की शुद्धि होती है। अग्निहोत्र करते समय प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपनी तथा अपने आस–पास की सफाई करता है। स्वस्तिवाचन, शान्ति के मन्त्रों से विश्वकल्याण की कामना–परक मन्त्रों का उच्चारण करता है। कभी–कभी ये यज्ञ विशाल रूप से किये जाते हैं, उस समय अनेक व्यक्ति परस्पर आदान–प्रदान करते हुए सामाजिक क्षमता, मैत्री–भाव के विकास में भी योग देते हैं। अतः यज्ञ राष्ट्र के लिए उपयोगी तत्त्व सिद्ध होते हैं।

3. **भूत यज्ञ**– इस यज्ञ में भोजनादि की आहुतियां अग्नि में दी जाती हैं। तदनन्तर कुत्ता, भंगी, कोढ़ी आदि प्राणियों को तथा पशु–पक्षियों, कीट–पतंगों आदि को भोजन का भाग देकर सन्तुष्ट किया जाता है। इस प्रकार भूत यज्ञ में दान एवं त्याग की भावना के साथ–साथ असमर्थ प्राणियों की मंगल कामना भी निहित है।

4. **नृयज्ञ**– नृयज्ञ को "अतिथि यज्ञ" भी कहते हैं। इसमें अतिथि–अभ्यागत, साधु–महात्मा तथा सज्जनों को भोजन–वस्त्र, दक्षिणा इत्यादि से सन्तुष्ट करके उनके सत्संग का लाभ उठाया जाता है। "अतिथि देवो भव।" इस यज्ञ से त्याग–दान एवं सेवा की भावना का प्रसार होता है। विद्वानों का आदर होता है।

5. **पितृ यज्ञ**– पितृ यज्ञ से आशय माता–पिता, आचार्य आदि गुरुजनों की सेवा–शुश्रूषा तथा आज्ञा पालन करते हुए श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करना है। इस यज्ञ से सृष्टि–विकास की प्रक्रिया में भी महत्वपूर्ण योगदान मिलता है यथा– हमारे माता–पिता ने हमें उत्पन्न कर संस्कृति में योगदान करके पीढ़ी का विकास किया है, उसी प्रकार मनुष्य का कर्त्तव्य है कि आगे की पीढ़ियों को सुरक्षित रखने के लिए प्रयत्नशील रहे। इस प्रकार सृष्टि–विकास तथा ज्ञान–धारा को अक्षुण्ण रखने के लिए पितृ–यज्ञ नितान्त अपेक्षित है। सन्तानोत्पत्ति से मनुष्य पितृ–ऋण से भी मुक्त हो जाता है।

अग्निहोत्रादि यज्ञ कर्मों को प्रदूषण निवारक माना गया है। आज नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड आदि गैसें वायु को प्रदूषित करने वाली गैसें हैं किन्तु आज वायु प्रदूषण एक गम्भीर समस्या बन गई है जिसके कारण श्वांस सम्बन्धी बीमारियों से लेकर फेफड़े के कैंसर व हृदय सम्बन्धी अनेकों बीमारियों का प्रकोप बढ़ रहा है। इन समस्याओं के मूल रूप से समाधान हेतु अग्निहोत्रादि यज्ञों को प्रत्येक घर में करने पर बल देना चाहिए तभी मनुष्य स्वस्थ एवं दीर्घायु को प्राप्त होगा। "जीवेम शरदः शतम्।" टाटलिक एवं त्रिले नामक विद्वानों के अनुसन्धान से यह बात सिद्ध हो गई है कि हवन–सामग्रियों के प्रज्जवलन से उत्पन्न धूम(गैस) से अनेक प्रकार के कीटाणुओं, विषाणुओं एवं जीवाणुओं का विनाश होता है तथा जलवायु शुद्ध होती है। इतना ही नहीं यज्ञानुष्ठान करने से पर्जन्य–वृष्टि द्वारा विश्व के समस्त जीव–जन्तुओं का पालन–पोषण होता है। यज्ञाग्नि से एक हजार वाट की विद्युत् निकलती है जो आकाश–तत्त्व में मिलकर सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमाणुओं के रूप में हमारे शरीर को लाभान्वित करती हैं।

यज्ञकर्मों में उच्चरित सस्वर मन्त्रोच्चारण की ध्वनि से वातावरण पवित्र हो जाता है तथा कर्णप्रिय होने के कारण अन्तःकरण शुद्ध तथा सात्विक हो जाता है। मन्त्रों में अनेक शक्तियां निहित हैं। शुद्ध मन्त्रोच्चारण से एक विशिष्ट प्रकार की ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं। वेदों में वर्णित है कि वृक्षों में भी जीवात्मा है एवं श्वसन क्रिया होती है जिसे आज वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार

किया है। यज्ञ आयोजनों के पीछे जहाँ विश्व की सुख–वैभव–समृद्धि एवं शांति की विज्ञान सम्मत परम्परा सन्निहित है तथा दैवीय शक्तियों का मन्त्रोच्चारण के द्वारा आह्वान–पूजन का मंगलमय समावेश है वहाँ ही मानवीय गतिविधियों तथा प्राकृतिक सन्तुलन को बनाये रखने में यज्ञों की उपयोगिता वैज्ञानिकों द्वारा मान्य है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि सूक्ष्म शरीरधारी देव समस्त स्थूल भौतिक पदार्थों के गन्धमात्र को ग्रहण करते हैं। भौतिक पदार्थों के गन्ध में परिवर्तन मात्र अग्नि के संस्पर्श से सम्भव है। अग्नि के माध्यम से देवों को हविर्भाग अर्थात्(हविष् आदि) की आहुति दी जाती थी। ऐसी धारणा थी कि देवगण उसे ग्रहण करते थे। जैसे–तैसे देवों को प्रसन्न करने की कुन्जी यज्ञानुष्ठान यजमान मानव के मन में घर करती गई वैसे–वैसे समाज के प्रबुद्ध वर्गों में इसका विस्तार एवं विकास होता चला गया। दैवीय प्रकोप, दुःख, रोग तथा जरा आदि से सन्तप्त मानव को यज्ञों के माध्यम से देवों का सर्वशक्तिसम्पन्न तथा सर्वसुखप्रदातृ रूप शनैः–शनैः अपनी ओर आकृष्ट करता चला गया तथा मानव मन को एक विश्वसनीय सम्बल तथा अभयपूर्ण आश्रय प्राप्त हो गया। फिर क्या था? वेदकालीन मानव पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, द्यौ, अन्तरिक्ष, सूर्य, चन्द्रमस् एवं वनस्पतियों की पूजा–अर्चना में संलग्न हो गये। विश्व का वातावरण उपर्युक्त प्राकृतिक महाशक्तियों के पारस्परिक सन्तुलन व सामंजस्य पर निर्भर करता है। शनैः–शनैः यज्ञ का इतना विकास हुआ कि उस कड़ी में बड़ी संश्लिष्टता एवं तकनीकीपन आता गया। यज्ञ एक प्रकार के विशिष्ट वैज्ञानिक प्रयोग बन गये।[9] वाक् का सूक्ष्म रूप विद्युत् चुम्बकीय तरंगें हैं जो मन से भी सूक्ष्मतर हैं। शतपथ ब्राह्मण (1/4/4/7) यहीं वाक् तडित्(थण्डर बोल्ट) के समान बहुत शक्तिशाली है। समस्त दुःखों के लिए यह रामबाण औषधि है। विद्युत् चुम्बकीय तरंगों को हम उचित प्रकार से प्रयुक्त करें तो न केवल ध्वनि प्रदूषण ही अपितु वायु प्रदूषण को भी दूर किया जा सकता है। 1928 ई0 में बर्लिन विश्वविद्यालय ने शंख ध्वनि का अनुसन्धान करके यह सिद्ध किया कि शंख ध्वनि की तरंगें रोगाणुओं को नष्ट करने में उत्तम एवं सस्ती औषधि है। शिकागो के डॉ0 डी0 ब्राइन ने बधिरों को शंख ध्वनि से ठीक किया।[10] सामवेद संगीत विद्या का जन्मदाता है। सामवेदीय मंत्र विविध रूप में ध्वनि प्रदूषण को रोक सकते हैं। वेदों में राजयक्ष्मा रोग के निवारण के लिए यज्ञ विहित है।[11]

यज्ञ एक उपचारात्मक प्रक्रिया है। यज्ञ के द्वारा मानव मस्तिष्क की कोशिकायें तथा त्वचा की कोशिकायें पुनर्जीवित होती हैं। यज्ञानुष्ठान से रक्त शोधन होता है एवं श्वांस सम्बन्धी– अस्थमा, फेफड़े का कैंसर, खसरा, चेचक, स्वाइन फ्लू आदि रोगों से मुक्ति मिलती है। यज्ञ वातावरण को प्रदूषण से सुरक्षित ही नहीं करता है अपितु वातावरण में रोग निवारक ऊर्जा(शक्ति) को विकसित करता है। गोपथ ब्राह्मण के तृतीय प्रपाठक में विविध होताओं के कार्यकलापों का वितरण अति वैज्ञानिक ढंग से उल्लिखित है। मनोवान्छित आहुतिगन्ध प्राप्त कर दाता यजमान के ऊपर देवों का प्रसन्न होना अत्यन्त स्वाभाविक बात थी। इस प्रकार यह एकमात्र यज्ञ प्रक्रिया ही थी जो देवों और मानव के मध्य सेतु बनकर स्थित हो गयी। जैसे–जैसे देवों की यज्ञ विधि रूपी कुंजी यजमान मानव के मन में आस्था की जड़ जमाती गयी वैसे–वैसे समाज के प्रबुद्ध वर्गों में यज्ञ का विस्तार एवं प्रचार सहज होता चला गया। यज्ञ मुख्यतः पाँच प्रकार के होते हैं– 1. अग्निहोत्र 2. दर्शपूर्णमास 3. चातुर्मास्य 4. पशुयाग, 5. सोमयाग।

भोजन विधि भी अग्निहोत्र विधि के समान है–

"सायं प्रातर्द्विजातीनामशनं श्रुति चोदितम्। नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्रसमो विधिः।।"(कर्मठगुरु, पृ0 38)

भोजन क्रिया भी इस प्रकार का यज्ञ कर्म है जैसे अग्नि में हवि प्रदान करते हैं उसी प्रकार जठराग्नि में भोजन ग्रास रूपी हवियां डालते हैं। उत्तम हवि से उत्तम यज्ञ का फल प्राप्त होता है इसी प्रकार उत्तम(संतुलित) भोजन से उत्तम आयु तथा स्वस्थ शरीर तथा मन की प्राप्ति होती है। "जैसा खाये अन्न, वैसा होवे मन।" अतः मानसिक स्वास्थ्य के लिए सुविचारित अन्न ग्रहण करना चाहिए। जैसे जलती हुई अग्नि में डाली गयी आहुति भस्म हो जाती है उसी तरह प्रज्वलित जठराग्नि के द्वारा भोजन भी अच्छी तरह पच जाता है। दोनों भोजन कालों में इतना अन्तर रखने का मूल कारण भोजन पचने में कठिनता है उसी प्रकार प्रज्वलित अग्नि में अधिक मात्रा में हविर्द्रव्य अर्पित करने से अग्नि सहजता से पूरा नहीं जला पायेगी एवं वह बुझ सकती है। उसी प्रकार अधिक बार भोजन करने से जठराग्नि मन्द पड़ जाती है तथा भोजन ठीक से नहीं पचता है।

मानव सभ्यता एवं सुख–शान्ति के इतिहास के निर्माण में इन यज्ञ प्रक्रियाओं का बहुमूल्य योगदान रहा है। यज्ञ ही कर्मचक्र, धर्मचक्र और जगचक्र का अनुवर्त्तन है। वेदों के साथ यज्ञों का नीरक्षीरवत् अटूट सम्बन्ध है। सम्पूर्ण वैश्विक क्रिया–कलापों की धुरी में यज्ञ की ही स्थिति है। उसी के सहारे विश्व ब्रह्माण्ड का गतिचक्र घूमता है। अतएव वैदिक ऋषियों ने सृष्टि का चक्र यज्ञ को माना है। यज्ञ को धर्म का स्वरूप अकारण ही नहीं कहा गया है। महर्षि कणाद ने धर्म का लक्षण करते हुए कहा है– "यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः धर्मः।" अर्थात् "जिसके द्वारा अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो, वह धर्म है।" अभ्युदय की हेतु यज्ञानुष्ठान है और निःश्रेयसका हेतु है ज्ञान–साधना। यज्ञादि कर्मानुष्ठानों की उपेक्षा के परिणाम स्वरूप ही आज विश्व में दुःख–दरिद्रता, अत्याचार, अन्याय, भुखमरी, आतंकवाद एवं भ्रष्टाचार का साम्राज्य है तथा फलस्वरूप मनुष्य का सामाजिक एवं नैतिक पतन तीव्र गति से हो रहा है। अतः जगत् को सुव्यवस्थित रूप से संचालित करने के लिए यज्ञानुष्ठान की अनिवार्यता का विधान किया गया था। यज्ञविहीन प्राणी आत्म पवित्रता के अभाव में छिन्न–भिन्न होकर पत्तों की तरह नष्ट हो जाते हैं।[13]

ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञों का विस्तृत उल्लेख मिलता है। कुछ विद्वानों का कथन है कि इन यज्ञों का महत्त्व मात्र परम्परागत रूढ़ियों और आस्था के कारण किया गया है किन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो यज्ञ–विधान के पीछे प्राचीनतम क्रान्तदर्शी ऋषियों की अत्यन्त सूक्ष्म वैज्ञानिक दृष्टि रही है। इन यज्ञों का अनुष्ठान मानव–जीव–जन्तुओं के लिए हितकारी भी है। यज्ञ में ही जगत् की समस्त समस्याओं एवं त्रिविध तापों(आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौमिक) का निराकरण निहित है। आध्यात्मिक एवं धार्मिक क्षेत्र में यज्ञों की महत्ता तथा उपयोगिता सिद्ध ही है किन्तु सामाजिक दोषों के निवारण समस्याओं के निदान एवं विज्ञान के युग में शारीरिक तथा मानसिक व्याधियों को दूर करने की एकमात्र औषधि "यज्ञ" है। भौतिकवादी वैज्ञानिक भी प्रकृति के संरक्षण का एकमात्र साधन "यज्ञ" को ही मानते हैं। यज्ञ प्रक्रिया की सृष्टि और उत्पत्ति वह विधि है जिससे प्राकृतिक जगत् में आवश्यक सन्तुलन बना रहता है। प्राकृतिक यज्ञ विश्व में प्रतिक्षण चलता रहता है। अतएव "यजुर्वेद" एवं "अथर्ववेद" में यज्ञ को सृष्टि चक्र कहा गया है। यज्ञ धूम से मेघ बनता है तथा मेघ से वृष्टि होती है। कात्यायन के श्रौत सूत्र के अनुसार द्रव्ययज्ञ की परिभाषा है– वह यज्ञ जिसमें देवता को दृष्टि करके किसी पदार्थ का त्याग किया जाता है। यज्ञ की परिकल्पना वैदिक महर्षियों की सर्वोत्कृष्ट देन हैं। इनको विभिन्न सांसारिक कामनाओं की पूर्ति का मुख्य साधन माना गया है। ऋग्वेदीय "पुरुष सूक्त" के अनुसार यज्ञ प्रक्रिया सृष्टि का प्रथम धर्म है। वेदों में जीव–जन्तुओं के हित की कामना हेतु विशुद्ध वायु का वर्णन विशेषरूपेण किया गया है। यह ही वातावरण को शुद्ध करने में सहायक है। जिस प्रकार वृक्षों के अभाव में ऑक्सीजन दुर्लभ है उसी प्रकार यज्ञानुष्ठान के अभाव में जीवन सारहीन एवं असम्भव है। ऋषिवर दयानन्द सरस्वती का दृढ़ विश्वास है कि यज्ञ ही पर्यावरण को शुद्ध करता है तथा जीव–जन्तुओं के स्वास्थ्य की रक्षा करता है। याज्ञिक अग्निहोत्रों के द्वारा वातावरण को शुद्ध करते हैं। इस संदर्भ में एक उदाहरण प्रस्तुत है– "पूना के फर्ग्युसन कॉलेज के वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में प्रयोग के उपरान्त यह पाया कि 6X6X2.5 गहरे ताम्रपत्र में आम्र की समिधाओं के माध्यम से सामान्य वनौषधि सम्मिश्रण से किया गया अग्निहोत्र एक बार की 108 आहुतियों से 36X22X10 के हॉल के 1000 घनफुट से भी अधिक घनफुट वायु में कृत्रिम रूप से निर्मित वायु प्रदूषण समाप्त करने में सफल रहा क्योंकि यज्ञ कक्ष वायु की वैज्ञानिक जाँच से शुद्ध पाया गया। वैज्ञानिकों ने यह भी अभिप्रमाणित किया कि हवन सामग्री से जो वायु बनती है उसमें अधिक भाग ऑक्सीजन का होता है।"[14] श्रीमद्भागवत गीता में उद्धृत है कि यज्ञों को करने से मानव अनजाने में हुई हिंसा से मुक्त हो जाता है।[15] यज्ञ न करने से होने वाली हानि पर प्रकाश डालते हुये श्रीमद्भागवत गीता में उद्धृत है "समस्त प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न की उत्पत्ति वृष्टि से होती है, वृष्टि यज्ञ से होती है और यज्ञ विहित कर्मों से उत्पन्न होता है।"[16] इससे यह सिद्ध होता है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठित हैं[9]। इतना ही नहीं मानव–जीवन की आधार शिला है–"यज्ञ"। पर्यावरण प्रदूषण के निवारण की दिशा में पर्यावरणविद् एवं वैज्ञानिक अत्याधिक प्रयत्नशील है। प्रकृति का सन्तुलन बनाये रखने में यज्ञों की अहम भूमिका है। पर्यावरण प्रदूषण का वर्तमान स्वरूप असन्तुलन का ही परिणाम है। यज्ञानुष्ठान द्वारा पर्यावरण सुरक्षा एक ऐसा विषय है जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता है। यदि अनदेखा करेंगे तो आने वाली पीढ़ी के साथ अन्याय होगा।

"संगतिकरण" से तात्पर्य व्यक्ति आपस में मिलकर सद्कर्मों को सम्पन्न करे। यज्ञानुष्ठान में सम्मिलित होकर लोग "यज्ञीय भावना" से प्रेरित होते हैं यथा–भूकम्प, सुनामी आदि दैवीय आपदा से त्रस्त लोगों को पीड़ामुक्त करने के लिए स्वायत्त संस्थाओं ने मिलकर जो कार्य किया, वह "संगतिकरण" ही है। जिस प्रकार विज्ञान के युग में विज्ञान का वर्चस्व दृष्टिगत होता है उसी प्रकार यज्ञादि अनुष्ठान बहुत से पदार्थों के सम्मेलन से निर्मित यज्ञ सामग्री से मानसिक शान्ति ही नहीं मिलती अपितु विभिन्न प्रकार की व्याधियों तथा रोगों का निवारण भी होता है। अथर्ववेद के एक स्थल पर वर्णित है कि देवगण हमारे यज्ञ को ग्रहण करें क्योंकि हम हविषों को एकत्रित करके आहुतियां दे रहे हैं।[17] अतएव मनुष्यों को चाहिए कि द्वेष आदि भावनाओं का परित्याग करें, तथा गृह, ग्राम, नगर, समाज, राष्ट्र तथा विश्व में "संगतिकरण" को विस्तारित करें, इसकी नितान्त आवश्यकता है। यथा "वसुधैव कुटुम्बकम्।"

इतना ही नहीं यज्ञ का प्राणतत्त्व "दान" है। यज्ञकर्म से जनों में सात्विक भावना का उदय होता है तथा वे विश्व कल्याण में निरत होते हैं। वर्तमान युग में अग्निहोत्रादि यज्ञों को प्रत्येक गृह में करने पर विशेष बल देना चाहिए जिससे मानव–जीवन सुखी, समृद्धिशाली, स्वस्थ एवं लोग दीर्घायु को प्राप्त हो। "शतं जीवेम शरदः सर्ववीराः"।[18] भारतवर्ष में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में यज्ञानुष्ठान के अभाव में भारतीय संस्कृति की गरिमा धूमिल हुई है और मनुष्य(प्राणी) दुःख–दारिद्रय, दुर्भिक्ष, अशान्ति, हिंसा, भ्रष्टाचार तथा आतंकवाद आदि को भोग रहा है। यज्ञों के पुनः अनुष्ठान से एवं प्रसार के द्वारा हम लोगों की सामाजिक, सांस्कृतिक, मानसिक, शारीरिक, आत्मिक एवं वैज्ञानिक उन्नति होगी तथा प्रदूषण जैसी विभीषिका से मुक्ति मिलेगी। पर्यावरण की शुद्धता से ओजोन गैस की पर्त में होने वाले छिद्रों की सम्भावना भी समाप्त हो जायेगी। भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने यज्ञों की सार्वभौमिक वैज्ञानिकता को माना है उसी से व्यक्ति, समाज, देश, राष्ट्र एवं विश्व का संरक्षण एवं कल्याण हो सकता है। अखिल विश्व के निखिल कार्य यज्ञों पर आश्रित हैं। अतः वैदिक ऋषियों ने विश्व कल्याण के लिए यज्ञ–विधान के द्वारा जो दिव्य भावना की सुर–सरिता प्रवाहित की है, वह अविरल गति से सृष्टि के आदिकाल से आजतक प्रवाहित होती जा रही है और उसमें अवगाहन कर देश एवं विदेशों के असंख्य पुण्यवान लोग दिव्यजीवन के भागी हुए हैं, हो रहे हैं तथा होते रहेंगे।

संदर्भ

1. सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुखभाग्भवेत्।।
2. ऋग्वेद 4/20/1; 7/33/3; 7/66/8; 8/26/16। इसी संदर्भ में के0 आर0 पोतदार का कथन– Sacrifice and hymns are almost as vitalty and inextricably connected with each other and can also be fittingly said to be evolving out of each other like the renowned 'Bija and Ankura' of the Vedantic doctrine.(सैक्रिफाइसेज इन द ऋग्वेद्, पृ0 19)
3. आयुर्यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पता श्रोतं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पता.....। यजुर्वेद संहिता 18/29।
   सर्वाभ्यो वा ए .....। तै0ब्रा0 2/1/8/3।
4. यजुर्वेद 23/62; अथर्ववेद 9/10/14।
5. यास्ककृत निरुक्त 8/3/22।
   देवतोद्देशेन द्रव्यत्यागो यागः। श्री विद्याधर शर्मा शतपथ ब्रा0 वॉल्यूम–2, पृ0 16–17।
6. सेक्रिफाइज इन द ब्राह्मण टेक्स्ट्स, डॉ0 गणेश उमाकान्त थीटे, पृ0 151।
7. तैत्तिरीय ब्राह्मण 3/2/1/4, शतपथ ब्राह्मण 1/5/4/5, 1/1/2/1–2।
8. तैत्तिरीय ब्राह्मण 3/2/3/12; 3/2/7/4; 3/3/6/1 शतपथ ब्राह्मण 1/1/3/1, 1/2/5/3, पं0 ब्रा0 13.3.2।
9. "..... the ritualist is perfectly in attributing to this hollowed acts and words a power which.....does something, the sacrament confers grace exopere operatio there are rather may be, matters of direct experience facts which anyone who chooses to fulfill the necessary conditions can verify empirically for himself." आल्डस ए0 हक्सले– पेरेनियल फिलॉसफी, पृ0 307।
10. अग्निहोत्र यज्ञ, स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, गुरुकुल प्रभात आश्रम भोलाझाल, मेरठ।
11. अष्टांगह्यदयम् 5/83, ऋग्वेद 10/16/11, अथर्ववेद 3/11/1, तैत्तिरीय संहिता 11/3; मैत्रायणी 2/27।
12. इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका वॉल्यूम–18, 801ए0–805ए0।
13. गुरुकुल शोध भारती, पृ0 138।
14. नास्त्ययज्ञस्य लोको वै नायज्ञो विन्दते शुभम्। अयज्ञो न च पूतात्मा नश्यति छिन्न पर्णवत्।।
15. यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः। भुन्जते ते त्वधं पापा ते पचन्त्यात्मकारणात्।। श्रीमद्भागवत गीता 3/13।
16. अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः। यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भुवः।। श्रीमद्भागवत गीता 3/14।
17. सं सं स्रवन्तु ..... हविषा जुहोमि।। अथर्ववेद 1/51/1।
18. "शतं जीवेम शरदः सर्ववीराः" अथर्ववेद 3/12/6।